THE TIMES OF INDIA

Date: 08-06-16

Girta censor

89 cuts on Udta Punjab show Censor Board esteems politics, not cinema

While India is subpar and struggling to improve in many areas from ease of doing business to education (the accompanying opinion essay details the latter), our film industry strides with pride on the global stage. Bollywood may even be India's best known brand, marshalling enormous soft power from Afghanistan to America. It deserves all possible support and encouragement. Instead, the Central Board of Film Certification, particularly under the chairmanship of Pahlaj Nihalani, seems to want to dishearteningly drag films back to the worst kind of licence raj. In the latest horror story, it has ordered as many as 89 cuts from the film Udta Punjab.

This is also a case of flagrant politicisation of film certification. Udta Punjab is about the drug menace and the fact that CBFC reportedly wants to chop all its references to Punjab, including towns and cities and in the title itself, is clearly related to impending assembly elections where drugs are an issue. The ruling Shiromani Akali Dal, which is an NDA ally at the Centre too, objects to the film referring to Punjab's drug problem. That a political party thinks it can dictate filmic content is proof of all that's wrong with film certification in India today.

Consider the tragicomedy that's been playing out since Nihalani took office in 2015. In a country and an age that is filled with the sound of gaalis CBFC has been lopping off even innocuous swearwords at whim. It's been waging war against kisses that go on for too long and against double meanings. It's squeamish about sex but also

objected to the word 'virgin' in Finding Fanny. Instead of 21st century cinema CBFC frequently acts like it's holding a brief for Amar Chitra Katha.

On the upside there's been the appointment of the Shyam Benegal headed committee to re-establish CBFC as a certification board rather than censor. It has recommended that CBFC should stop scissoring films and only assign them different classifications – like suitable for plus 12 years of age or adults only. These reforms must be implemented on an urgent basis. Economies need creativity and innovation to be competitive in the 21st century, it's no longer about iron-jawed workers turning out nuts and bolts on a factory assembly line. Killing Bollywood, one of the few sectors where creativity and innovation flourish at present, would be tantamount to crushing the spirit of India for transient, if not imaginary, political gain.

THE HINDU
INDIA'S NATIONAL NEWSPAPER SINCE 1878

Date: 07-06-16

Clear the air on FDI in retail

Given the Centre's focus on attracting investment and improving India's 'Ease of Doing Business' ranking, it is time it took an unambiguous stand on foreign direct investment (FDI) in retailing. While it is true that the government has eased some rules relating to investment in single-brand retail operations, the norm on 'sourcing' locally remains a significant grey area, as reflected in the discussions around Apple's plans for India. In November, the Centre eased the rules permitting 100 per cent FDI in 'Single Brand Product Retail Trading' subject to the sourcing caveat — the precondition being that companies with more than 51 per cent foreign ownership must source 30 per cent of the value of goods in India, preferably from medium,

small or micro enterprises. In isolation, the requirement of a certain proportion of domestic content in the products has a socio-economic relevance, given its potential to create jobs and protect livelihoods. But the sourcing norm has inhibited FDI inflow; worse, it could fall foul of the WTO's National Treatment norms. The Centre therefore amended this condition allowing for an exemption to entities selling "products having 'state-of-the-art' and 'cutting-edge' technology", and even more ambiguously, in cases "where local sourcing is not possible". Predictably Apple has sought waivers citing the exemption clause. Its case seems to have found support with Commerce Minister Nirmala Sitharaman, who said her Ministry was in talks with the Finance Ministry on allowing Apple to open company-owned stores in India and to explore whether there was a need for separate guidelines for sourcing waivers.Rather than get into a potentially convoluted debate about when exemptions should be given, the best course, given the circumstances, is to drop the sourcing condition altogether. It is counterproductive and open to charges of arbitrariness. Allowing Ministry officials the discretion to decide on what constitutes 'cutting-edge' technology or whether local sourcing is possible or not opens the door for less-than-transparent outcomes and the possibility of litigation. A competitor that has invested in local manufacturing capacity would justifiably feel hard done by if a rival incorporating a similar level of technological advancement in its products were exempted. The Centre's stated objectives for relaxing FDI norms — "improving the availability of such goods for the consumer" and "enhancing the competitiveness of Indian enterprises through access to global designs, technologies and management practices" — would be rendered fruitless if overseas companies, subject to the whims of interpretation, opt out of either entering the market or from making significant investment. Ultimately, keeping it simple works best, especially when it concerns investment rules

दैनिक भास्कर

Date: 08-06-16

फिल्म नहीं, नशे को सेंसर करने से बचेगी प्रतिष्ठा

पंजाब की नशाखोरी पर केंद्रित और गाली-गलौज से भरपूर फिल्म 'उड़ता पंजाब' के प्रदर्शन पर अंतिम फैसला नहीं हुआ है, लेकिन केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड (सीबीएफसी) ने ढेर सारी काट-छांट और यहां तक कि फिल्म के नाम बदलने का सुझाव देकर यह साबित कर दिया है कि फिल्म के मुद्दे पर जबर्दस्त राजनीतिक गहमागहमी मची है। जहां कांग्रेस चाहती है कि शाहिद कपूर, करीना कपूर और आलिया भट्ट जैसे सितारों वाली यह फिल्म जैसी बनी है वैसी ही दिखाई जाए ताकि जनवरी 2017 में होने वाले पंजाब विधानसभा के चुनाव में नशे का मुद्दा पूरी तौर पर उभरे। वहीं शिरोमणि अकाली दल नहीं चाहता कि यह मुद्दा चुनाव में प्रमुखता पाए, क्योंकि इससे अकाली दल और भाजपा की साझा सरकार बदनाम होगी। उसकी वापसी की संभावना कमजोर हो जाएगी। दोनों दल अपने हितों को पंजाबी समाज की प्रतिष्ठा से जोड़कर पेश कर रहे हैं। हालांकि, जब पंजाब का युवा नशे में डूब रहा था और वहां के हर पॉप गीत में हिंसा व नशे का गुणगान हो रहा था तब उन्हें पंजाबी प्रतिष्ठा का ख्याल नहीं आया।

दिक्कत यह है कि भारत और विशेषकर पंजाब में पैदा हुए हमारी आजादी के योद्धाओं और संतों-महात्माओं ने जिस राजनीति और संस्कृति को त्याग और बलिदान के मूल्यों से सींचा था वह धन और सत्ता के नशे की शिकार होती गई। उसने अपनी सत्ता को चलाने के लिए युवाओं को नशे की आदत डाली। आतंकवाद उसका सबसे विकृत रूप था, लेकिन उस आतंकवाद से लड़ने में अगर पंजाब और देश के जांबाज सिपाहियों ने योगदान दिया तो उससे कम योगदान वहां के संस्कृतिकर्मियों, बॉलीवुड के कलाकारों और मीडिया ने नहीं दिया, क्योंकि सामाजिक बुराई से कोई भी संघर्ष सिर्फ कानून-व्यवस्था का संघर्ष नहीं है। वह

चेतना के स्तर का संघर्ष है। इसलिए अगर हिंदू-मुस्लिम संबंधों को प्रभावित करने वाले 1992-93 के दंगों पर 'बॉम्बे'और कश्मीर के उग्रवाद पर 'मिशन कश्मीर' जैसी फिल्म बन सकती है तो पंजाब की नशाखोरी पर 'उड़ता पंजाब' क्यों नहीं। अगर प्रकाश झा बिहार पर केंद्रित 'दामुल', 'गंगा जल' और 'अपहरण' जैसी नकारात्मक फिल्में बनाकर वहां के समाज को झकझोरते हैं तो मौजूदा फिल्म के माध्यम से पंजाब के समाज को क्यों नहीं सचेत किया जा सकता? पंजाबी समुदाय बेहद जीवंत और ऊर्जावान समाज है, बशर्ते उसे भटकाव का शिकार न होने दिया जाए। ऐसे में फिल्म अगर उसके भटकाव का एक्सरे है तो उसे देखने और उसके आधार पर इलाज की तैयारी की ही जानी चाहिए।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 08-06-16

रक्षा संबंधों की डोर पर चलेंगे मोदी और ओबामा

दोधारी तलवार / अजय शुक्ला

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अमेरिकी दौरे के पहले गत शनिवार को रक्षा मंत्री मनोहर पर्रिकर ने दक्षिण चीन सागर में चीन की मनमर्जी वाली आक्रामक नीति पर संयमित तरीके से प्रहार किए। सिंगापुर में शांग्रीला वार्ता में शिरकत करते हुए पर्रिकर ने चीन के बारे में आम तौर पर अपनाये जाने वाले भारतीय अधिकारियों के कातर रवैये को दरकिनार करते हुए कड़ा रुख अपनाया। उन्होंने दक्षिण चीन सागर विवाद से जुड़े सभी पक्षों से बल प्रयोग के इस्तेमाल की धमकी से उपजे भय से उबरने की अपील की। पर्रिकर ने साफ कहा कि पश्चिमी प्रशांत महासागर से होने वाले समुद्री परिवहन का किसी भी तरह के दबाव से मुक्त होना खुद भारत के हित में है क्योंकि भारत का आधे से भी अधिक समुद्री व्यापार इस मार्ग से ही होता है। रक्षा मंत्री ने कहा कि भारत भले ही क्षेत्रीय विवादों में किसी का पक्ष नहीं लेना चाहता है लेकिन उसकी हमेशा से यह मान्यता रही है कि समुद्री परिवहन अंतरराष्ट्रीय कानून के मुताबिक पूरी तरह स्वतंत्र होना चाहिए।

परिकर ने कहा कि किसी भी एक देश का क्षेत्रीय विवादों में एकाधिकार नहीं होना चाहिए। उनका यह बयान निश्चित रुप से भारत को दक्षिण चीन सागर मामले में अमेरिकी रुख के करीब लाकर खड़ा कर देता है। परिकर ने अमेरिका को यह भी याद दिलाया कि भले ही दक्षिण-पश्चिम एशिया में भारत और अमेरिका के समान हित हैं, लेकिन भारत की सबसे बड़ी चिंता पश्चिम एशिया में जारी हिंसक संघर्ष और पाकिस्तान के दखल से खतरे में पड़ी अफगानिस्तान की स्थिरता है। भले ही रक्षा मंत्री ने खुलकर यह बात नहीं कही लेकिन पाकिस्तान को लगातार मिल रहे अमेरिका के कूटनीतिक और सैन्य सहयोग से भारत खुश नहीं है। अमेरिकी सहयोग के बलबूते पाकिस्तान आतंकवादी संगठन तालिबान को समर्थन जारी रखे हुए है जिससे अफगानिस्तान क े पुनर्निर्माण में भारत को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने का मौका नहीं मिल पाता है।

दरअसल यही वह भू-राजनीतिक पृष्ठभूमि है जिसमें प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिका यात्रा हो रही है। दक्षिण-पूर्व एशिया में तो भारत और अमेरिका के हित जुड़ते हुए नजर आते हैं लेकिन दक्षिण और पश्चिम एशिया में दोनों के हितों में विरोध दिखाई देता है। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के साथ होने वाली बातचीत में इन पर चर्चा होने की पूरी संभावना है। वैसे अमेरिकी प्रशासन के पाकिस्तान को दिये जा रहे अबाध समर्थन की समीक्षा किए जाने की चर्चाएं हैं। पिछले महीने तालिबान के सरगना मुल्ला मुहम्मद मंसूर के अमेरिकी ड्रोन हमले में मारे जाने के बाद पाकिस्तान के लिए भी अमेरिकी मदद का अनिश्चित काल तक जारी रह पाना मुश्किल हो सकता है। अमेरिकी कांग्रेस पहले ही 8 एफ-16 लड़ाकू विमानों की खरीद के लिए पाकिस्तान को धन मुहैया कराने पर रोक लगा चुकी है। कांग्रेस के निचले सदन प्रतिनिधि सभा ने अमेरिका-भारत रक्षा तकनीक और भागीदारी अधिनियम को भी पारित कर दिया है। इन दोनों वाकयों से पता चलता है कि अब पाकिस्तान को लेकर अमेरिकी सांसदों का धैर्य जवाब देने लगा है और वे चाहते हैं कि भारत के साथ भागीदारी को आगे बढ़ाया जाए।

रक्षा क्षेत्र में भागीदारी को लेकर उम्मीदों का भारी बोझ है लेकिन इससे बहुत ज्यादा हासिल होने की संभावना कम ही दिख रही है। हो सकता है कि भारत को अमेरिकी केंद्रीय कमान में औपचारिक रुप से शामिल कर लिया जाए। अभी तक भारत अमेरिकी सेना के प्रशांत

कमान का हिस्सा है जो दोनों देशों के बीच सैन्य अभ्यासों का समन्वय करता है। दोनों देशों के बीच दो बुनियादी समझौतों पर व्यापक चर्चा हो चुकी है। सैन्य संचालन के बारे में जानकारी देने संबंधी करार पर तो जल्द ही दस्तखत होने की उम्मीद है लेकिन संचार और सूचना सुरक्षा संबंधी अधिक महत्त्व के करार में अभी वक्त लग सकता है। माना जा रहा है कि सैन्य संचालन आदान-प्रदान वाले करार पर आने वाली राजनीतिक प्रतिक्रिया से इसका भविष्य तय होगा। मोदी के अमेरिकी दौरे पर भारत-अमेरिका संयुक्त अभ्यास के बारे में हमेशा की तरह अच्छा महसूस कराने वाले बयान दिए जाएंगे। खास तौर पर अलास्का में पिछले महीने हुए वायुसेना के रेड फ्लैग अभ्यास और मालाबार में हुए नौसैनिक अभ्यास का जिक्र होगा। सीएच-47एफ हेलीकॉप्टर और अपाचे हेलीकॉप्टरों के खरीद के बारे में भी कुछ फैसला हो सकता है। अमेरिका से बेहद हल्की हॉवित्जर तोपों की खरीद के 70 करोड़ डॉलर के सौदे पर भी कुछ बातचीत आगे बढऩे की संभावना है। भारतीय नौसेना के लिए दूसरे स्वदेशी विमानवाहक युद्धपोत के निर्माण में अमेरिका के साथ भागीदारी की भी संभावना जताई जा रही है। नौसेना युद्धपोत पर तैनात हथियारों की नई लॉन्च प्रणाली के लिए इच्छुक है जिसके लिए अमेरिकी विमानवाहक पोतों की प्रणाली मददगार हो सकती है। वर्ष 2012 में शुरू की गई रक्षा तकनीक और व्यापार पहल अभी तक गति नहीं पकड़ पाई है।

ओबामा ने पिछले साल की भारत यात्रा के दौरान चार मार्गदर्शक परियोजनाओं का ऐलान किया था लेकिन उनमें कोई खास प्रगति नहीं देखी गई है। माना जा रहा कि रक्षा मंत्री एश्टन कार्टर अपनी इस पसंदीदा परियोजना को रफ्तार देने के लिए कुछ कदम उठा सकते हैं। वैसे भारत में मोदी के अमेरिकी दौरे की कामयाबी को इस रूप में देखा जाएगा कि वह परमाणु आपूर्तिकर्ता देशों के समूह (एनएसजी) में शामिल होने के लिए भारत की पहल पर ओबामा का समर्थन हासिल कर पाते हैं या नहीं? मोदी एनएसजी देशों का समर्थन हासिल करने की मुहिम में लगे हुए हैं। स्विट्जरलैंड का सहयोग हासिल करने में उन्हें कामयाबी भी मिल चुकी है। लेकिन अमेरिका का उदार समर्थन काफी अहम होगा। ओबामा के कार्यकाल के अभी सात महीने बचे हुए हैं और अगर वह भारत को एनएसजी का सदस्य बनवाने में मददगार बनते हैं तो भारत में उनके कद्रदानों की संख्या बढ़ जाएगी।

दैनिक जागरण

Date: 08-06-16

मुक्त व्यापार की कठिन राह

भारत सरकार द्वारा यूरोपियन यूनियन के साथ मुक्त व्यापार समझौता संपन्न करने का प्रयास किया जा रहा है। इन्हें फ्री ट्रेड एग्रीमेंट (एफटीए) कहा जाता है। यूरोपियन यूनियन में यूरोप के प्रमुख देश जैसे फ्रांस, जर्मनी तथा इटली सम्मिलित हैं। एफटीए संपन्न होने के बाद दोनों देशों के बीच व्यापार आसान हो जाता है। दोनों देशों द्वारा न्यून आयात कर लगाए जाते हैं। एफटीए संपन्न होने से यूरोपियन बाजार हमारे निर्यातों के लिए खुल जाएंगे। भारत में फैक्ट्रियां लगेंगी। कपड़े, टेलीविजन तथा कार जैसे माल तथा साफ्टवेयर जैसी सेवाओं के निर्यात से भारत में भारी मात्रा में रोजगार बनेंगे। चीन ने इस नीति को अपना कर अपनी जनता की आय में भारी वृद्धि हासिल की है। इस दृष्टिकोण को अपनाते हुए नीति आयोग के प्रमुख अरविंद पनगडिया ने कहा है कि हमें विश्व बाजार पर कब्जा स्थापित करना चाहिए। सरकार के इस मंतव्य का स्वागत है।

यूरोपियन यूनियन के साथ पिछले कई वर्षों से एफटीए संपन्न करने की बात चल रही है। 2015 में भारत ने वार्ता को रद कर दिया था, क्योंकि यूरोपियन यूनियन ने भारतीय कंपनी जीवीके बायोसाइंस द्वारा निर्मित 700 दवाओं पर प्रतिबंध लगा दिया था। जीवीके बायोसाइंस के एक कर्मचारी ने तमाम वैश्विक संस्थाओं को ईमेल भेजकर शिकायत की कि कंपनी द्वारा अंतराराष्ट्रीय मानकों का उलंघन करके दवाएं बनाई जा रही हैं। तब यूरोपीय यूनियन ने जीवीके कंपनी का निरीक्षण किया। पाया कि वास्तव में कमियां थीं। इसके बाद इस

कंपनी द्वारा बनाई गई दवाओं पर प्रतिबंध लगा दिया गया। जवाब में भारत ने एफटीए की वार्ता को रद कर दिया। इस प्रकरण से जाहिर होता है कि एफटीए तथा पेटेंट कानूनों के बीच घनिष्ठ संबंध है। विकसित देश अपने बाजार को हमारे निर्यात के लिए तब ही खोलते हैं जब उनकी कंपनियों को पेटेंट की कड़ी सुरक्षा उपलब्ध कराई जाए। एफटीए के अंतर्गत बढ़े हुए निर्यातों से हमें लाभ होता है। लेकिन साथ-साथ कड़े पेटेंट कानून से हमें महंगे माल खरीदने पड़ते हैं और हानि होती है। एफटीए के आकलन के लिए जरूरी है कि लाभ-हानि, दोनों का समग्र आकलन किया जाये। मेरी जानकारी में नीति आयोग ने ऐसा अध्ययन नहीं कराया है। विकसित देशों के बाजार हमारे लिए खुलेंगे, इसमें भी संदेह है। वर्ष 1995 में डब्ल्यूटीओ संधि के संपन्न होने के बाद विश्व व्यापार में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। लेकिन अब इसके दुष्परिणाम सामने आने लगे हैं। विकसित देशों की जनता एफटीए के विरोध में खड़ी हो रही है। अमेरिका में

इस वर्ष के अंत में होने वाले राष्ट्रपति के चुनाव के तीनों प्रत्याशियों ने आयातों पर अधिक टैक्स लगाने की वकालत की है। डेमोक्रेटिक प्रत्याशी हेलरी क्लिंटन ने कहा है कि मैक्सिको तथा कनाडा के साथ संपन्न हुए एफटीए में सुधार की जरूरत है। डेमोक्रेट प्रत्याशी बर्नी सैंडर्स ने अमेरिका द्वारा संपन्न किए गए एफटीए को रद करने की मांग की है और दूसरे पक्ष द्वारा संशोधन न किए जाने पर इन्हें रद करने की मांग की है। रिपब्लिकन प्रत्याशी डोनाल्ड ट्रंप ने भी सभी एफटीए में संशोधन करने की मांग की है। ऐसा ही वातावरण इंग्लैंड में बन रहा है।

वर्तमान में इंग्लैंड यूरोपीय यूनियन का सदस्य है। यूरोपीय देशों में बने माल तथा उनके श्रमिकों को इंग्लैंड में आने-जाने की पूरी छूट है। इससे इंग्लैंड के श्रमिकों के रोजगार का हनन हो रहा है। इंग्लैंड में जून 2016 में जनमत संग्रह होना है कि इंग्लैंड यूरोपीय यूनियन में बना रहे या बाहर आ जाए। वर्तमान में 41 प्रतिशत लोग बाहर आने के पक्ष में हैं, जबकि 43 प्रतिशत यूरोपीय यूनियन के सदस्य बने रहने के पक्ष में हैं। ताजा समाचारों के अनुसार लोग बाहर आने के पक्ष में तेजी से बढ़ रहे हैं। स्पष्ट है कि विकसित देशों के मुक्त व्यापार के विरुद्ध जनमत बन रहा है। लोगों का अनुभव है कि मुक्त व्यापार से बड़ी कंपनियों को लाभ होता है और आम जनता को हानि। कंपनियों को पूरे विश्व में फैलने व लाभ कमाने का अवसर मिल जाता है। जैसे भारतीय तथा यूरोपीय यूनियन के बीच एफटीए संपन्न हो

जाए तो जीवीके बायोसाइंस को यूरोप में दवा बेचने का अवसर मिल जाएगा, परंतु यूरोपीय कंपनियों को पेटेंट की कड़ी सुरक्षा उपलब्ध कराने से जनता को महंगी दवा खरीदनी पड़ेगी।नोबल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री जोसेफ सगलिट्ज ने इस बात को बार-बार कहा है कि मुक्त व्यापार से कंपनियों को लाभ तथा लोगों को हानि होती है। इस परिस्थिति में यूरोपियन यूनियन से हम एफटीए संपन्न करा लें तो भी इसके सफल होने में संदेह बना रहेगा। जो आवाज एफटीए के विरोध में आज अमेरिका और इंग्लैंड में उठ रही है वह कल यूरोपीय यूनियन में भी उठेगी। फिर भी यूरोपीय यूनियन के साथ एफटीए संपन्न करने से हमें लाभ होगा, क्योंकि हमारे यहां श्रमिकों के वेतन कम हैं। भारत में माल की उत्पादन लागत कम आती है। लेकिन चीन के सामने हमारी परिस्थिति इसके ठीक विपरीत है। अत: यदि हम मुक्त व्यापार के सिद्धांत को मानते हैं तो चीन से सस्ते माल का आयात होगा और भारतीय श्रमिकों के रोजगार का हनन होगा-बिल्कुल उसी तरह जैसे कि हमारे माल के निर्यात से अमेरिकी श्रमिकों का हो रहा है।अरविंद पनगडिय़ा जैसे मध्यधारा अर्थशास्त्रियों का मानना है कि विकसित देशों के साथ एफटीए संपन्न करके हम आगे बढ़ेंगे। यह विचारधारा असफल होगी। पहला कारण कि यूरोपीय यूनियन के साथ मुक्त व्यापार समझौता संपन्न हो जाए तो यूरोपीय कंपनियों को पेटेंट कानून के अंतर्गत भारत में महंगा माल बेचने की छूट मिल जाएगी। बढ़े हुए निर्यातों से हमें हुआ लाभ इस महंगे माल को खरीदने से निरस्त हो जाएगा। दूसरा कारण है कि विकसित देशों में एफटीए के विरोध में स्वर जोर पकड़ रहा है। ऐसे में यूरोपीय यूनियन द्वारा एफटीए तभी संपन्न किया जाएगा जब उनकी कंपनियों को भारत में छूट ज्यादा मिले और हमारे निर्यातों को उनके देश में प्रवेश की छूट कम मिले। तीसरा कारण है कि हम यदि मुक्त व्यापार के नियम को मानते हैं तो चीन के लिए अपने बाजार को खोलना पड़ेगा। हमारे श्रमिकों के रोजगार नष्ट होंगे। अतएव मुक्त बाजार के रास्ते हमारे श्रमिकों का हित नहीं स्थापित होगा, जैसा अमेरिका तथा इंग्लैंड में हो रहा है। अपने घरेलू बाजार के विस्तार पर ध्यान देना ही हमारे लिए हितकारी होगा।

[लेखक डॉ. भरत झुनझुनवाला, आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ हैं और आइआइएम बेंगलुरू में प्रोफेसर रह चुके हैं]